Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 1, January-2019, ISSN 2230-7540

# गांधी जी के संरक्षकता सिद्धान्त की सार्थकता

**Sumit***

Teacher, Department of Political Science

***सारांश -*** *गांधी जी के संरक्षकता के सिद्धान्त से पहले संरक्षकता के अर्थ को समझना हमारे लिए जरूरी है। न्यासिता शब्द अंग्रेजी के 'ट्रस्ट' शब्द से बना है जो विधिवेताओं के द्वारा सामान्यतया व्यवहत होता है। न्यास में जमीन, किसी चीज को कोष, शेयर आदि रखे में जाते हैं। न्यास की अवधारणा जमीन और व्यवहार की अन्य संपत्ति को किसी के यहां सुरक्षित रूप से रखने के रीति रिवाज से हुई। अंग्रेजी कानून के मुताबिक सम्पति के उपभोग तथा उपयोग के विषय में अनेक सिद्धान्त निकाले हैं। इसमें न्यास का अर्थ यह हुआ कि कोई सम्पति जो किसी के स्वामित्व में है वह दूसरे के नियन्त्रण में उसकी मर्जी से उसके लाभकारी उपयोग के लिए दी जाती है।*

----------X----------

भारत में न्यासिता की उत्पत्ति 'ईशोपनिषद' से हुई है। भारतीय सम्बन्ध में न्यासी का उपयोग मन्दिरों व मठों के सन्दर्भ में किया जाता है। न्यासी का मतलब किसी ऐसे व्यक्ति से होता है जो मन्दिर की संपत्ति का संचालन बिना किसी निहित स्वार्थ के करता है। देवदत दा भोलकर के अनुसार कि, "बिना किसी प्रतिपादन की अपेक्षा के विशेषाधिकार, शक्ति, पद व प्रतिष्ठा का स्वैच्छिक परित्याग ही न्यासिता है।"[35] भारत के धार्मिक ग्रन्थ ऋग्वेद में भी यह कहा गया है कि "जो व्यक्ति अकेला खाता है वह चोर है।"[36] ईशावास्य उपनिषद् ग्रन्थ के प्रथम श्लोक की पंक्ति में 'तेन व्यक्तेन भुंजीयाः ही संरक्षकता का मूल सिद्धान्त है। यानि त्याग की वृति से ही भौतिक वस्तुओं का भोग करना। संसार की सभी वस्तुएँ परमेश्वर की देन हैं उसी की कृपा के प्रसाद रूप में हम इसका इस्तेमाल करें, निजी माल्कियत समझ कर नहीं। हमारे जीवन को ठीक तरह से संचालित करने के लिए जितना भोजन, वस्त्र, आवास आदि की जरूरत है उतना ही हम उपयोग करें और शेष धन भगवान को या समाज को अर्पित कर दें। 'मा गृद्यः कस्यस्विद्धनम्' दूसरे के धन की कभी लालसा न करें।[37] गांधी जी ने इस श्लोक के विषय में कहा था कि भारत के सब धर्म ग्रन्थ यदि समुद्र में डूब जायें और यह एक श्लोक ही बच जाए तो भी मानवता का उद्धार करने की क्षमता इसमें है। इस श्लोक में संरक्षकता का सम्पूर्ण विचार समाया हुआ है।[38]

भारतीय पुराण साहित्य में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि सम्पति, राजपाट आदि के प्रति क्या भावना होनी चाहिए। राजा जनक और भरत उत्कृष्ट संरक्षक कहे जा सकते हैं।[39]

सरंक्षकता के बारे में गांधी जी के जो विचार हैं उनकी कल्पना 1300 वर्ष पूर्व भी की गई थी। पवित्र ग्रन्थ हदीस में इस आश्य का पद्य है लोगों के पास जो कुछ धन दौलत है वह मेरी संपत्ति है, क्योंकि गरीब मेरे बच्चे है और धनी उनके पास जो धन दौलत है उसके संरक्षक। इसलिए जो धनवान मेरे गरीब बच्चों की ओर से खर्च नहीं करेंगे उन्हें मैं नरक में भेज दूंगा, जहां उनकी कोई सास्सम्हाल नहीं होगी।[40]

इस प्रकार प्राचीन समय से ही सन्तों ने, धर्म संस्था ने और ज्ञानियों ने अपनी-अपनी तरह से दर्शाया है कि व्यक्ति और समाज का संपत्ति के प्रति क्या दृष्टिकोण होना चाहिए।

प्रत्येक देश व समाज की अपनी विशेषताएँ होती हैं। भारतवर्ष में एक पुरातन देश है और यहाँ की संस्कृति अत्यन्त प्राचीन होने के कारण यहाँ की सामाजिक व्यवस्था उसके सामाजिक आदर्श व मर्यादाएँ अपनी विशेषताएं रखते हैं। किसी भी प्रकार

[35] सुरजीत कौर जौली, गांधी एक अध्ययन, कन्सैप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 2007, पृ. 239-40

[36] दूध नाथ चतुर्वेदी, महात्मा गांधी जी का आर्थिक दर्शन, कांशी विद्यापीठ मुद्रणालय, वाराणसी, 1965, पृ. 288

[37] मुन्नारायण, "सर्वभूमि गोपाल की, गांधी-मार्ग, अंक 1, अप्रैल, 1970, पृ. 14

[38] नरेन्द्र दुबे, ट्रस्टीशिप सिद्धान्त और व्यवहार, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1991, पृ. 37

[39] सुरिनी इन्दिरा, गांधीयन डावट्राइन ऑफ़ ट्रस्टीशिप, डिस्करी पब्लिंशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ. 37

[40] हरिजन सेवक, 30 सितम्बर, 1939, पृ. 263

www.ignited.in

की शासन प्रणाली में आर्थिक व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान होता है। भारतीय समाज पर जो पश्चिमी लोकतन्त्र की प्रणाली अंग्रेजों द्वारा भारतीयों पर थोपी गई थी उससे भारतीय समाज में अनेक बराईयों का जन्म हुआ। महात्मा गांधी ने इन बुराईयों को निकट से देखा और यह अनुभव किया कि आज समाज का पतन हो रहा है उसका मूल कारण भेदभावपूर्ण वर्तमान आर्थिक व्यवस्था है। इस प्रकार गांधी जी ने विभिन्न समस्याओं और परिस्थितियों को समझकर और वर्तमान समाज की दुर्दशा देखकर एक नया सिद्धान्त पेश किया। उसके आर्थिक सिद्धान्त ने भारतीय समाज की ही नहीं बल्कि विश्व समाज की राजनैतिक सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के लिए एक मन्त्र प्रदान किया।

गांधी जी ने 1903 में संरक्षकता के सिद्धान्त के बारे में अपने विचार दिए। इसके बाद भी गांधी जी ने इस सिद्धान्त के बारे में विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में अपने लेखों के द्वारा जनता के सामने विचार प्रकट किए। गांधी जी के अनुसार "संरक्षकता का सिद्धान्त इस बात पर आधारित है जिसके पास धन है वह उसे अपना समझकर फिजूल खर्च न करे। संरक्षक समझकर रखे और लोक कल्याण या समाज हित में उपयोग करे। इसका आश्य यह है कि जब तक धनिक वर्ग स्वेच्छापूर्वक अपना धन त्याग नहीं देता या समाज की भलाई में नहीं लगता तब तक अहिंसात्मक क्रान्ति के द्वारा उनका हृदय परिवर्तन के लिए प्रयास करने चाहिएं और धनी वर्ग यदि जन सामान्य की तरह रहते हैं या कम खर्च करते हैं, अपने धन का उपयोग समाजहित में करते हैं तो जनता के संरक्षकता की भावना रखने वाला व्यक्ति लोगों को दबाकर और उनका शोषण करके धन कमाने का प्रयत्न नहीं करता है। वह आगे यह भी कहता है कि मैं धनिक वर्ग के धन का शक्ति से अपहरण करने का समर्थक भी नहीं हूँ बल्कि शान्तिपूर्ण तरीके से अहिंसात्मक साधनों से पूँजीपतियों के हृदय परिवर्तन के द्वारा धन का प्रयोग समाज के हित में करने का पक्षधर हूँ।[41]

गाँधी जी पूँजीवाद को समाप्त करने के लिए साम्यवादियों से भी ज्यादा उत्सुक हैं। लेकिन उसका पूंजिवाद को समाप्त करने का तरीका अलग है वह संरक्षकता के सिद्धान्त पर आधारित है। यह सिद्धान्त उच्च चरित्र की निशानी है और मनुष्य को यह जानकारी देता है कि वह मनुष्य पहले है और सेठ-साहूकार बाद में। गांधी जी के संरक्षकता के सिद्धान्त की परिभाषा देवदत्त डबहोलकर ने शब्दों में, "बिना किसी चीज की लालसा रखते हुए अधिकरों, शक्ति और प्रसिद्धि का ऐच्छिक त्याग करना संरक्षकता का सिद्धान्त है।[42]

के. अरूणाकलम के अनुसार, "संरक्षकता एक व्यक्ति में निहित विश्वास, संपत्ति के सन्दर्भ में जो उसके पास है और जिसने भी वह अपना अधिकार रखता है उसका उपयोग वह अपने लाभ के लिए न करके दूसरों की भलाई के लिए करता है।"[43]

गांधी जी का सरंक्षकता का विचार ऐसी सीमित कानूनी व्याख्या से अधिक व्यापक और गम्भीर है। गांधी जी किसी व्यक्ति को संपत्ति का स्वामी नहीं मानते, वह ईश्वर को ही संपत्ति का स्वामी मानते हैं। मनुष्य के विकास की दृष्टि से संपत्ति को बहुत तुच्छ चीज मानते हैं। संपत्ति सेवा के लिए है और उसकी व्यवस्था इस प्रकार की जाए कि व्याख्या करने वाले मनुष्य का अध्यात्मिक विकास हो, वह अपनासक्त भाव से संपत्ति को ग्रहण और उपयोग करे गांधी जी द्वारा दिए संपत्ति के सिद्धान्त के मूल तत्व हैं:-

1. मानव के अस्तित्व का मुख्य उद्देश्य संपत्ति नहीं है और न कुछ सामाजिक कर्तव्यों की पूर्ति मात्र है, वरन् आध्यात्मिक विकास है।

2. जीवन में संपत्ति का स्थान अवश्य है लेकिन उसका मालिकी और भोग के अधिकार से कोई सम्बन्ध नहीं है।

3. संपत्ति रखने का उद्देश्य संग्रह वृति के संतोष के लिए न होकर, मानवीय सुख और व्यक्तित्व का विकास हो।

4. धन सम्पति की ही तरह मनुष्य का कोई शारीरिक और बौद्धिक गुण हो सकता है इसे भी वह ईश्वर या प्रकृति प्रदत्त माने और समाज से उसे यह गुण मिला है यह भावना रखकर और समाज के कल्याण के लिए संरक्षक की तरह अपने गुण और शक्ति का उपयोग करें।[44]

गांधी जी के संरक्षकता के सम्बन्ध में समय-समय पर विचार व्यक्त किए लेकिन सन् 1945 में प्रो. दांतवाला, श्री किशेर लाल मश्रुवाला तथा नरहरि पारिख ने उनके सामने संरक्षकता की व्यावहारिक व्याख्या की एक प्रति तैयार करके गाँधी जी

[41] दूधनाथ चतुर्वेदी, पूर्वोक्त. 4, पृ. 295

[42] देवादत्त डाबोलकर, ट्रस्टीज., ब्लांइड एलेय और एब्रीकथ्रो, गांधी मार्ग, वॉल्यूम 8-9, नवम्बर-दिसम्बर, 1985, पृ. 588

[43] के. अरूणाकलम, अप्लाईड ट्रस्टीशिप, गांधी मार्ग, वॉल्यूम 8-9, नवम्बर-दिसम्बर, 1985, पृ. 621

[44] वही, पृ. 59

www.ignited.in

को दी जिसमें गांधी जी ने कुछ संशोधन किए और उसे अन्तिम रूप दिया। यह व्यावहारिक व्याख्या इस प्रकार है।

1. सरंक्षकता एक ऐसा साधन प्रदान करती है, जिससे समाज की मौजूदा पूँजीवादी व्यवस्था समतावादी व्यवस्था में बदल जाती है। उसमें पूंजिवाद की तो गुंजाइश नहीं है। उसका आधार यह श्रद्धा है कि मानव स्वभाव ऐसा नहीं है जिसका कभी उद्धार ही न हो सके।

2. वह संपत्ति के व्यक्तिगत स्वामित्व का कोई अधिकार स्वीकार नहीं करती, हाँ उसमें समाज अपनी भलाई के लिए किसी हद तक इसकी इजाजत दे सकता है।

3. उसमें धन के स्वामित्व और उपभोग के कानूनी नियम की मनाही नहीं है।

4. इस प्रकार राज्य द्वारा नियन्त्रित संरक्षकता में कोई व्यक्ति अपनी स्वार्थ सिद्धी के लिए या समाज के हित के विरूद्ध संपत्ति पर अधिकार रखने या उसका उपभोग करने के लिए स्वतन्त्र नहीं होगा।

5. जिस तरह उचित न्यूनतम जीवन वेतन स्थिर करने की बात कही गई है, ठीक उसी तरह यह भी तय कर दिया जाना चाहिए कि वास्तव में किसी भी व्यक्ति की ज्यादा से ज्यादा आमदनी कितनी हो। न्यूनतम और अधिकतम आमदनीयों के बीच का फर्क उचित, न्यायपूर्ण और समय-समय पर इस प्रकार बदलता रहने वाला होना चाहिए कि उसक झुकाव इस फर्क को मिटाने की तरफ हो।

6. गांधीवादी अर्थव्यवस्था में उत्पादन का स्वरूप समाज की जरूरतों से निश्चित होगा, न कि व्यक्ति की सनक या लालच से।[45]

पूंजिवादी अर्थव्यवस्था में उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्व, व्यक्गित सुविधा, आराम, प्रतिष्ठा रक्षण आदि के लिए संपत्ति का संचय करने, मुनाफा कमाने की प्रेरणा, सेवा, योग्यता, परिश्रम आदि। सबका मूल्यांकन पैसे के आधार पर भाव, कम ज्यादा करने के लिए एकाधिकार की प्रवृति, सस्ते कच्चे माल की उपलब्धि और पक्के माल की खपत के लिए बाजारों पर नियन्त्रण रखने के अनेक तरह के उपाय अपनाये जाते हैं। पूंजिवादी अर्थव्यस्था में राज्य के हस्तक्षेप का निषेध किया जाता है क्योंकि यह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के खिलाफ माना जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि पूंजिपति वर्ग की राज्य की नीतियों का संचालन करने लगता है। जनमत का निर्माण करने वाले साधनों पर पूंजिपति वर्ग का नियन्त्रण हो जाता है। इतना ही नहीं मनुष्य इतना भ्रष्ट हो जाता है कि संपत्ति के लिए भाई-भाई का गला काटता है, निर्जीव वस्तु के प्रति आदर मनुष्य तथा भाई से बढ़कर हो जाता है। इसके विपरीत सरंक्षकता के सिद्धान्त में मनुष्य अपने साथ के प्राणियों को कष्ट नहीं देता है, उनके सुख का ध्यान रखता है। साथ ही वह अपने काम करने वाले लोगों को भी उतना ही सम्मान और मालिकाना हक प्रदान करता है जितना स्वयं को।[46]

सरंक्षकता की व्यवस्था में प्राकृतिक कारणों से पैदा होने वाली विषमता का सतत् निराकरण होता रहता है। इसी को ध्यान में रखते हुए गांधी जी ने कहा था, "मैं बुद्धिशाली व्यक्ति को अधिक कमाने दूँगा, उसकी बुद्धि को कुंठित नहीं करूंगा। परन्तु उसकी अधिकांश कमाई समाज की भलाई के लिए उसी तरह काम में आनी चाहिए जैसे बात के सारे कमाऊ बेटों की आमदनी परिवार के कोष में जमा होती है। वह अपनी कमाई के संरक्षक ही बन कर रह सकेंगें।[47]

गांधी जी ने कहा था, "मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि राज्य ने पूंजिवाद को हिंसा से दबाने की कोशिश की तो वह खुद ही हिंसा के जाल में फंस जाएगा और फिर कभी अहिंसा का विकास नहीं कर सकेगा। राज्य हिंसा का एक केन्द्रित और संगठित रूप ही है। व्यक्तिगत तौर मैं तो यह चाहूँगा कि राज्य के हाथों में शक्ति का ज्यादा केन्द्रियकरण होने के बजाए संरक्षकता के सिद्धान्त का विस्तार हो क्योंकि मेरी राय में राज्य की हिंसा की तुलना में व्यक्ति की हिंसा कम हानिकारक है। लेकिन यदि राज्य की मालिकी अनिवार्य ही हो, तो मैं राज्य की कम से कम मालिकी की सिफारिश करूंगा।[48]

गांधी जी ने स्वयं कहा है कि संरक्षकता संपत्ति के स्वामित्व और उपभोग का नियमन करने के लिए कानून बनाने का निषेध नहीं करती, लेकिन कानून बनाकर संरक्षकता को लागू करना असम्भव है। इसके लिए पर्याप्त लोकमत तैयार करने की जरूरत पड़ेगी। जब तक सामान्य जनता इसको स्वीकार न करे तब तक कानून बनाने से कोई लाभ नहीं होगा। क्योंकि इसमें संपत्तिवानों के विचार परिवर्तन के अतिरिक्त आम

[45] एम. के. गांधी, ट्रस्टीशिप, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद

[46] दूधनाथ चतुर्वेदी, पूवोक्त-1, पृ. 291

[47] नरेन्द्र दुबे, पूर्वोक्त-3, पृ. 73

[48] एम. के. गांधी, पूर्वोक्त-13, पृ. 26

www.ignited.in

जनता जैसे श्रमिकों, व्यवस्थापकों आदि के भी विचार परिवर्तन का सवाल है। इसलिए इसको लागू करने के लिए लोक शिक्षण की जरूरत है क्योंकि जब समाज में पर्याप्त वातावरण बन जाएगा तब इसे आसानी से लागू किया जा सकेगा।[49]

कोई भी धनवान व्यक्ति गरीबों के सहयोग के बिना धन नहीं कमा सकता। मनुष्य को अपनी हिसंक शक्ति का मान है क्योंकि वह तो उसे विरासत में मिली है। गांधी जी अहिंसक, असहयोग और सविनय अवज्ञा जैसे सत्याग्रह के अस्त्रों का प्रयोगक करने पर भी बल देते हैं। उन्होंने आजादी मिलने के बाद एक बड़े धनवान व्यक्ति के यह पूछने पर कि "स्वराज तो मिल गया अब आप क्या कार्यक्रम अपनाएंगे।" तब गांधी जी ने जवाब दिया कि अब मुझे तुमसे लड़ना है लेकिन यह लड़ाई बड़ी मीठी होगी। इसी प्रकार 1942 में आगा खाँ महल में प्यारे लाल जी से बात करते हुए बापू ने कहा था कि "रूस में मालिकों की संपत्ति का अपहरण करके उसे लोगों में बाँटने से जो क्रान्ति भावना फैली उससे हमारी क्रान्ति ज्यादा महान होगी।"[50]

गाँधी जी ने कहा था "सरंक्षकता का बुनियादी सिद्धान्त यह है कि इसमें पूंजिपति और श्रमिक दोनों ही संरक्षक होंगे और इनमें कोई भी मालिक नहीं होगा।"[51]

गाँधी जी ने इन सिद्धान्तों के अतिरिक्त उन्होंने संरक्षकता के मूल आधार भी बताए हैं जिनका पालन किए बिना संरक्षकता का सिद्धान्त निरर्थक साबित होगा।

इस प्रकार गांधी जी का समाज में परिवर्तन का सिद्धान्त गहरी जीवन दृष्टि का प्रतीक है। 1937 में उन्होंने वर्धा शिक्षा प्रणाली की स्थापना की। 1938 में गांधी जी ने केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड की स्थापना की। अगस्त 1942 में गांधी जी ने अंग्रेजों को भारत से बाहर निकालने के लिए 'भारत छोड़ो आन्दोलन' चलाया जिसके कारण गांधी जी व अन्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। जून 1944 में शिमला में प्रमुख नेताओं का सम्मेलन हुआ परन्तु कोई फैसला नहीं हुआ।

1947 ई. में हिन्दु मुसलमानों के बीच झगड़ा उत्पन्न हो गया। ब्रिटेन सरकार के समझौते के आधार पर पंजाब व बंगाल के क्षेत्र अलग होंगे। माउंटबेटन ने भारत आते ही सब दलों के नेताओं से बातचीत व विचार विनिमय करके इंग्लैंड गए। 3 जून को ब्रितानिया सरकार ने भारत व पाकिस्तान को अलग-अलग राज्य बना दिया गया। गांधी जी ने हिन्दू-मुस्लमानों के बीच झगड़े को रोकने के लिए भारत और पाकिस्तान के बीच समझौता कराया। इसी स्थिति में 30 जनवरी, 1948 को नाथूराम गौडसे नामक एक हिन्दू ने बन्दूक की गोलियों से घायल कर दिया और अहिंसा के पुजारी होठों पर ईश्वर का नाम लेते हुए वे शहीद हो गए।

गांधी जी की मृत्यु भी उनके जीवन की तरह अकारथ नहीं गई। उनकी मौत से वे विचार और सिद्धान्त और भी अधिक सजीव और प्रभावकारी हो उठे जिनके लिए वे जीवन भर लड़े थे। मृत्यु के बाद महात्मा गांधी अपने जीवन की अपेक्षा अधिक बलशाली हो उठे और यही कारण है कि संसार में करोड़ों व्यक्ति उनके विचारों और सिद्धान्तों से प्रभावित हैं।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची


1. अग्रवाल, सुरेन्द्र प्रसाद, "महात्मा गांधी, विचार विथिका", कान्सेट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 2017
2. अग्रवाल, अलका एवं "गांधी दर्शन (विविध आयाम)", पोइन्टर अग्रवाल, शिखा पब्लिर्शस, जयपुर, 2015
3. अय्यर, राघवन, "दि मोरल एण्ड पोलिटिकल वार्निंग ऑफ महात्मा गांधी", कलारदन प्रैस, आक्सफोर्ड, 1997
4. आनन्द, वाई.पी., "नॉन-वायलंस इॅन ए वायलंस वर्ड ए गान्धीयन रीसपोंस", गांधी स्मृति एण्ड दर्शन समिति, न्यू दिल्ली, 2015



**Corresponding Author**

**Sumit***

Teacher, Department of Political Science

sumit09091986@gmail.com


[49] गणेश गद्रे, अमानतदारी की अहिंसात्मक रणनीति, गांधी-मार्ग, अंक-1, अप्रैल, 1970, पृ. 38

[50] महात्मा गांधीए पूर्वोक्त-13, पृ. 38

[51] महादेव देसाई, ट्रस्टीशिप एक महान विकल्प, प्रगति प्रिंटर्स शाहदरा, दिल्ली, 1979, पृ. 138

www.ignited.in